गुरुवाणी

बन्धुओं! हमें तो लगता है कि सादगी से विवाह किया जाये और हम जो आडम्बर पे खर्च करते है उसे उन दीन-दुखियों के बीच अगर आप वस्त्र के रूप में, अनाज के रूप में दे सकते हैं तो हमें लगता है कि उससे आपको ज्यादा फायदा मिलेगा, आपकी सोच बदलेगी एक अच्छे समाज की परिकल्पना साकार होगी। –पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015

वर्ष-१५, अंक ७, वाराणसी। बुधवार १५ अप्रैल २०१५ ई० सहयोग राशि ४.२५

अघोरेश्वर

अघोर + ईश्वर के ही योग को अघोरेश्वर की संज्ञा दी जाती है, यह सर्वविदित है कि अघोर यानी जो घोर न हो, क्लिष्ट न हो, साथ ही ईश्वर यानी भगवान (भग + वान) जिसमें भग का अर्थ होता है विद्या, बल, बुद्धि, ऐश्वर्य और शान्ति का सम्मिलित स्वरूप। वान का अर्थ है जिसके पास ये समस्त शक्तियाँ विराजमान हो, उपलब्ध हो, उसी को हम ईश्वर या भगवान कहते हैं, जब हम अपने भगवान या गुरु रूप में ईश्वर को हृदय से याद करते हैं तो हम यही चाहते हैं कि उनके पास उपरोक्त सभी जो छ: गुण हैं कि वे सभी हमें उपलब्ध हो एवं जीवन पर्यन्त इन सभी गुणों विशेषताओं से सुसज्जित रहते हुए जीवनयापन करें। इसी प्रकार के व्यक्तित्व धारण करने वाले चलते, फिरते मानव रूप में महेश्वर को ही अघोरेश्वर की संज्ञा दी जाती है। भारतवर्ष की यही थाती रही है कि यहाँ की देवभूमि पर मनुष्य के रूप में समय एवं काल के अन्तर्गत अघोरेश्वर का प्राकट्य होता आया है तथा मानव कल्याण के निमित्त ही उनके द्वारा प्रकृति के नियमों का समादर करते हुए विभिन्न कार्य-कलापों के द्वारा मनुष्यों को त्राण पहुँचाने का अभीष्ट कार्य पूर्ण किया जाता रहा है। इसी क्रम में गुरु-शिष्य की भी परम्परा का अविर्भाव हुआ है क्योंकि अघोरेश्वर या सर्वेश्वर वो होते हैं जिनमें भूत-भावन भगवान भोले की सभी दिव्य विशेषतायें सद्य: विराजमान रहती हैं तथा उनमें सर्वेश्वरी यानी समस्त के ईश्वरी की शक्ति समाहित रहती हैं। ऐसे विराट मानव शरीरधारी ईश को ही अघोरेश्वर की संज्ञा से विभूषित किया जाता है।

जनसामान्य की सहज स्वीकृति एवं धारणा हेतु बीसवीं सदी के प्रचण्ड समाज-सुधारक अघोरेश्वर भगवान राम जी द्वारा इसी निमित्त साधारण शब्दों में वेदों पुराणों, उपनिषदों आदि का सार-तत्त्व "अघोर वचन शास्त्र" नामक ग्रन्थ में पिरोया गया उद्धृत है जिसके छठवें अध्याय में जनमानस को उत्कृष्ट वातावरण में सफल जीवन निर्वाह हेतु "अघोरेश्वर" के क्रिया-कलापों, दर्शन-पथ का विस्तृत विवचेन किया गया है।

अघोरेश्वर के अनुयायी या शिष्य को अपने कार्य के प्रति नितान्त समर्पित, अनुशासित एवं उनके आदर्शों पर चलने वाला कहा गया है। अघोरेश्वर अभेद से दूर, करुणा के सागर एवं समस्त मानव को समभाव सद्भाव, स्नेह प्रदान करने वाले होते हैं, आत्मबुद्धि को ही प्रश्रय देने वाले होते हैं। वे सामान्य जनों के ही सदृश्य सरल व्यवहार करते हैं वे कुत्ते एवं गाय में भेद नहीं करते। ब्राह्मणों, कर्मकाण्डियों तांत्रिकों एवं चाण्डाल को एक समान दृष्टि से ही देखते हैं उनमें अचल भाव रहता है, वे प्रचण्ड रूप से स्थिरता को प्राप्त किये रहते हैं। वे वसुन्धरा की भाँति स्थिर भाव से व्यवहार करते हुए सभी को आलिंगन किये रहते है, न किसी का तिरस्कार होता है न किसी का अनावश्यक आदर, क्योंकि वे वास्तव में सद्गुण या सन्त के समस्त सद्लक्षणों से आच्छादित होते हैं। ये ऐसे नाविक होते हैं जो इस लोक तथा परलोक दोनों में ही पार कराते हैं, उनमें अदम्य ऊर्जा समाहित होती है,वे असाधारण प्रकृति के पर्याय होते हैं, तथा दूर-दूर तक संकीर्णता, उतावलेपन, अवांछनीयता को कभी बढ़ावा देने को स्वीकार नहीं करते। वे जाति, महजब आदि से नितान्त अपने को अछूता बनाये रखते हैं। अघोरेश्वर को जानने, उन्हें समझने के लिए मानव मस्तिष्क बौना पड़ जाता है क्योंकि वे अथाह सागर सदृश्य हैं एवं मन, कर्म एवं बुद्धि के पहुँच से परे होते हैं। वे सदा चलायमान, सतत गतिशील बने रहते हैं, ताकि सृजन का कार्यक्रम अबाध गति से चलता रहे, वे पूर्णरूपेण जितेन्द्रिय होते हैं तथा उनके सफल अनुयायी भी परोपकारी, निर्विकार, सरल, सदाचारी एवं व्यवहार में गंभीरता लिये हुए दिखते हैं। मनुष्यों के मध्य अघोरेश्वर की उपस्थिति मात्र से ही वातावरण में शान्ति, मानसिक तृप्ति एवं उनके मौन से भी आत्मिक अभिव्यक्ति की निर्झरनी बहती रहती है, जिससे अपार आनन्द का अनुभव स्वमेव उद्भाषित होता रहता है, अघोरेश्वर रूप में सन्त न तो अधिक बाह्यमुख होते हैं न तो उपदेशक ही होते हैं, बल्कि जनकल्याण हेतु अपनी मौज में अपने अनुयायी के सतत कल्याण हेतु ही उपदेशक के पथ पर भी अग्रसर हो जाते हैं। उन्हें अपने मान, अपमान का जरा भी ध्यान नहीं रहता बल्कि व्यक्ति या समाज-विशेष स्वयं ही अपने तद् आचरण के अनुसार तत्क्षण अनुपातिक परिणाम पाने को बाध्य होता है। उनकी आभा, प्रभामण्डल का सौरभ सुगन्ध ऐसे फैलता है, जिससे बरबस ही जनसमुदाय भौरों की भाँति उमड़ता रहता है तथा दर्शन को लालायित रहता है और दर्शन प्राप्त कर भाव-विभोर हो मस्त हो जाता है। औघड़, अघोरेश्वर निर्दोष बालक की भाँति व्यवहार करते हैं, साँप, रस्सी, मिष्ठान्न अथवा विष्ट तक से निरपेक्ष व अभेद प्रवृत्ति के पोषक होते हैं उनके कर्त्तव्य पालन एवं दायित्व निर्वहन के अन्दर स्वर्ग अथवा नर्क, पाप-पुण्य का कोई महत्व नहीं होता, न तो इसकी कोई परिकल्पना ही होती है। अघ यानी पाप, कष्ट से विरत रखने या रहने वाले को ही अघोरेश्वर का नाम दिया जाता है जैसे प्रत्येक जीवित प्राणियों में बिना अभेद के ही प्राण का महत्व होता है, वह शरण में आने वाले की रक्षा उसी प्रकार ससमय कर देते है जैसे किसी सागर में डूबने वाले को अदृश्य हाथ का सहारा अचानक मिल जाये। अघोरेश्वर के प्रिय साधक अत्यन्त सहज, सुगम, सरल, मृदुल तरीके से उपलब्ध साधनों से पूर्णत: संतुष्ट रहता है, जिससे वह अघोरेश्वर के सन्निकट बना रहने का सौभाग्य पाता है। अघोरेश्वर के दरबार में मातृ-शक्ति यानी महिलाओं को सदा गौरव एवं सादर सम्मान दिया जाता है जिससे उनका सतत कल्याण एवं मंगल हो सके। अघोरेश्वर कभी झुंडों में नहीं पाये जाते न तो वे बहुसंख्यक ही होते है बल्कि विरले होते हैं एवं "सिंहन के नहीं लाहिड़े, हंसन की नहीं पांति, लालन की नहीं बोरियाँ, सिंह न चले जमात" वाली उक्ति को चरितार्थ करते हैं तथा बाँस में वंशलोचन के दुर्लभतम प्राप्ति की ही भाँति कभी-कभी सौभाग्य से उपलब्ध हो जाते हैं। यद्यपि अघोरेश्वर का अनुदान, सद्कृपा सुपात्र पर ही बरसती है, जो वीर्यवान नहीं है, बलवान नहीं है, सामर्थ्यवान नहीं है उसे मंत्रों का प्रभाव या देवत्व का वरदान मिलने में अतिशय विलम्ब हो जाता है जबकि अघोरेश्वर के विचारों को अंगीकार करने में जो सक्षम है, जो समर्थ होते हैं, उन्हें वह फल एक पखवारे में ही प्राप्त हो जाता है, उन्हें पन्द्रह बरस तक की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। यह भी सत्य है कि संसार सतत परितर्वनशील है गतिशील है जबकि अघोरेश्वर तो पूर्णत: पूर्ण होते है, उनमें न कोई परिणाम होता है न कोई प्रत्यक्ष परिवर्तन ही घटित होता है न कोई प्रत्यक्ष परिवर्तन ही पास होता है, अघोरेश्वर के साधकों के पास संयम, सतर्कता, सहनशीलता के साथ ही समवर्तिता का ही लक्षण सदैव घर किये रहता है।

शेष पृष्ठ दो पर

मृत्यु एवं मानव

यह जानते हुए कि मौत अवश्यंभावी है, अटल है लगभग प्रत्येक व्यक्ति ऐसे जीवन यापन करता रहता है जैसे कि इस बला से उसका कोई वास्ता न हो, उसे अपने मृत्यु का जरा भान भी नहीं होता। तभी तो यक्ष प्रश्न ''किं आश्चर्य परमत:'' यानी संसार का सबसे घोर आश्चर्य क्या है, के उत्तर में युधिष्ठिर ने कहा ''मृत्यु'' मृत्यु का आना शाश्वत सत्य है, तब भी हम अपनी दुनिया में, अपने सांसारिकता में अपने मोह-माया में इस कदर फँसे रहते हैं कि इस ओर ध्यान ही नहीं जाता। हाँ, यदि किसी शोक-संतप्त परिवार को ढांढ़स देने का समय हो, किसी को मृत्यु शैय्या पर जाते देख लेते हैं तो अवश्य क्षण भर के लिए हमारा मस्तिष्क कौंधता है, परन्तु फिर हम अपने रोजमर्रा के कार्यों में लिप्त हो जाते हैं, इसी को सन्तों के द्वारा करकट वैराग्य'' की संज्ञा दी जाती है यह सर्वविदित तथ्य है कि उस अज्ञात के द्वारा मानव को शरीर रूपी आनन एक अबोध विशेष यानी अल्प अवधि के लिए ही प्रदान किया गया है जो प्राण-प्रखेरू के उड़ते ही मिट्टी की संज्ञा से संज्ञापित होने लगता है परन्तु माया के बंधन में हम ऐसे खोये रहते हैं कि जैसे सदा-सदा के लिये यहाँ हमारा जीवित रहना जन्म सिद्ध अधिकार हो, क्योंकि औसतन अधिकांश व्यक्ति जीवन भर अपने पत्नी-बच्चों का कल्याण धन, जन, समृद्धि की वृद्धि की पिपाशा में इस कदर व्यस्त रहता है कि प्रतिपल वह अपने अवधि के अन्तिम पल को पहुँच रहा है, उसे पता नहीं चलता, तथा इसी मृगतृष्णा में उसे अपनी आत्मा की आवाज सुनने की फुर्सत नहीं होती, यदि सुनता भी है तो वह अपने सांसारिक स्वार्थ, द्वेष, ईर्ष्या के पाँव तले उसे दबा देता है तथा कुछ अनर्थ तक भी करता रहता है, अन्तत: जब वह अपने अर्थी पर पहुँचने के पूर्व अफसोस करता है तो ''अब पछताते होते क्या जब चिड़िया चुग गई खेत'' की ही उक्ति सटिक बैठती है।

अत: इस दुर्लभ अल्प जीवन को कैसे जियें ताकि मरणोपरान्त हमारी आत्मा ही हमें न कोसे, इसके लिये कहा गया है कि ''दो बातों को मूल मत जो चाहे कल्याण; यानी अपने आराध्य का, उनकी वाणियों को, उपेदशों को सतत हृदय में धारण कर अपने कर्त्तव्य पथ पर आरूढ़ रहना चाहिए, अपने पुरुषार्थ को भोज-ते को परहित के लिए भी सदुपयोग करना अत्यन्त अपरिहार्य आचरण है। नारायण इक मौत को दूजे की भगवान'' यानी यदि हम अपने जीवन काल में ही प्रार्थना के साथ प्रयत्न करते रहे तो वह सार्थक होता है, उससे बिना किसी वर्जना को तोड़े हुए हम अपने कर्त्तव्य पथ पर अग्रसर होते हैं, जो व्यक्ति आपाधापी के आँधे दौड़ में अपने को सम्भाल नहीं पाते, अपितु शार्टकट अपना कर येन-केन-प्रकारेण सर्वसिद्धि को प्राप्त कर लेना चाहते हैं, वे कंटकाकीर्ण मार्ग में जाकर अन्तत: फँस जाते हैं जहाँ से उनका निस्तान असंभव हो जाता है। जबकि एक संयमित, कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्ति सहिष्णुता के साथ जीवन के समतल अच्छी सड़क का वाहन यात्री होता है वह बड़े ही इत्मीनान, निष्ठा एवं सादगी से एक-एक किलोमीटर की यात्रा बड़े ही सुखद एवं सजीव ढंग से आनन्द लेते हुए पार करता है। अत: हमारा जीवन नितान्त स्वार्थी न होकर परमार्थी होना चाहिए, यदि हमारे पड़ोसी भूखे रहेंगे, संतप्त रहेंगे तो निश्चित रूप से उनकी आँच लगेगी, जिसका लपट से एक दिन हम भी झुलस सकते हैं, ठीक यही स्थिति समाज में जीने वाले हर प्राणी को है, जो यह नहीं सोच रहा है कि आज वह सुख भोगरहा है उसमें थोड़ी कमी कर अपने अन्य बंधुओं को भी हम आनन्द प्रदान कर सके उस परमार्थ में ही, किसी भूखे को खिलाने में अंध नंगे को वस्त्र प्रदान करने में बेजोड़ सच्चा सुख मिलता है, इसीलिए औघड़ अघोरेश्वर के दरबार में आने वाले सभी भक्तों में समवर्तिता का भाव उत्पन्न किया जाता है एवं माया रूपी बादलों को हटाकर हमें औघड़ के प्रकाश को सीधे ग्रहण करना एवं ''जीओ और जीने दो'' की पद्धति से जीवन-यापन की सीख दी जाती है।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ **0542-2277155.**

e-mail–kinaram@rediffmail.com

www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

अघोरेश्वर

हम भारतवासियों का वीरवंशजों का सौभाग्य है कि औघड़ अघोरेश्वर सरल भाव से हमारे आपके मध्य उपस्थित होते हैं, रमण करते रहते हैं, अत: अघोरेश्वर के साधकों, गृहस्थों, अनुयायियों को चाहिए कि वे उनके गुणों को आत्मसात करें, उनके वाणी का अनुशरण को तथा उनके द्वारा निर्देशित सन्मार्ग पर चलते रहे; क्योंकि ऐसी विभूतियाँ बड़े ही सौभाग्य से सर्वत्र मंगल कामना के ध्येय से ही अवतरित होती है तथा कायापात के बाद भी आकाश खप्पर या कपाल खप्पर में कारण शरीर से मौजूद रहती है तथा स्थिरचित्त साधकों को, गृहस्थों को, उपासकों की वे सदैव रक्षा करते हैं तथा मिलते रहते हैं वे अभाव को दूर करने के ही निमित्त दर्शन देते हैं, ऐसे में हमारे द्वारा सुअवसर को पहचान भरपूर लाभ उठा लेना ही श्रेयस्कर है और यह तब संभव है जब हम स्वयं को ईमानदारी से पूर्णरूपेण समर्पित रक्खें। अघोरेश्वर धन-मान-बड़ाई से बिल्कुल परे होते हैं, उनमें विनम्रता कूट-कूट की भरी रहती है तथा मानव की शारीरिक, मानसिक, पीड़ा से ही वे व्यथित होते हैं तथा पाप, ताप, सन्ताप को जलाने के लिए, हमारे, आपको पूर्णत: दोषमुक्त करने के लिये सदा तत्पर रहते हैं, वे मानव को धन, मान, प्रतिष्ठा, लोभ, लालच से सदैव एक दूरी बनाये रखने का निर्देश देते हैं, वह तद्क्रम में व्यवस्था करते हैं ताकि धन-लोलुप, मान लोलुप, बड़ाई लोलुप मानव इन सभी तुच्छ चीजों के चक्कर में अपने सबसे बड़े धन यानी शान्ति को न खो दे, वह कहीं अपना चारित्रिक पतन न कर लें, वह दैहिक, दैविक, भौतिक सन्तापों से अपने को मुक्त न कर लें। साधक अर्कमण्यता से न व्याप्त हो जाय, उसमें पुरुषार्थ की, दायित्वों के निर्वहन की क्षमता का सदैव नवीनीकरण होता रहे, यही पर्यवेक्षण अघोरेश्वर का होता है, वे एक सतर्क किसान की भाँति अपने आर्त्त भक्त रूपी फसलों की निरन्तर निराई, गोड़ाई एवं उपयुक्त सिंचाई करते रहते हैं जिससे अंकुरण एवं फसल पकने के मध्य कहीं कोई बीमारी या रोग न छूने पाये, उनकी फसल स्वस्थ एवं पुष्ट दाने वाली होती है। वे तब तक विराम नहीं लेते जबतक उनकी फसलें पूर्ण विकसित हो पक नहीं जाती। अपने अभीष्ट की पूर्ति नहीं कर लेती या लक्ष्य भेद नहीं कर लेती। वे सदैव मनुष्यों, प्राणियों के मध्य सुख शान्ति एवं विश्राम को बाँटते रहते हैं एवं ''सर्वे भवन्ति सुखिना: सर्वे सन्तु निरामया:'' को देखकर स्वयं भी सुख की अनुभूति करते है। औघड़ अघोरेश्वरों को भी सामाजिक शान्ति, विश्राम समानता बाँटने में अनेक प्रकार के व्यवधानों से जूझना पड़ता है। आसुरी शक्तियाँ उनका भी रास्ता भरसक रोकने का प्रयास करती है, बृहस्पताचार्य से शुक्राचार्य (असुरों के गुरु) किसी मायने में कत्तई कमतर नहीं थे, परन्तु देवत्व गुणधारी की विजय विशेष देवताओं, ईश्वर या अघोरेश्वर के कृपा पात्र बनने से होती आयी है। अघोरेश्वर भगवान की तरह पूजित होना भी नहीं चाहते बल्कि वे तो समाज, समय एवं काल के परिवर्तन को दृष्टिगत रखते हुए एक नई व्यवस्था, एक अभिनव दिशा का संकेत करते हैं, जिससे हर काल में मानवीय सद्गुणों में अनवरत निखार आये, चाहे कोई किसी वर्ण, सम्प्रदाय, पढ़ा-लिखा, अपढ़ जैसा भी हो। उसके अनुरूप उसमें विकास ज्योति की प्रखरता बढ़ती चली जाये। अघोरेश्वर तो वह भोला, निर्द्वन्द्व, निर्दोष, सक्रिय, निष्क्रिय सभी रूपों में अवस्थाओं में उपस्थित रहने रहने वाले होते हैं। उनमें घृणा, द्वेष, विष से वंचित रहने का प्राकृतिक लक्षण विद्यमान होता हैं, तभी तो वे इस पद पर प्रतिष्ठित होकर ''अघोरा ना परो मंत्र: नास्ति तत्वं गुरो: परम'' के चरितार्थ करते हैं, अघोरेश्वर सरल, सुव्यवस्थित जीवन के दाता होते हैं वे तांत्रिक तामझाम, बीहड़ कर्मकाण्ड एवं नाना प्रकार के भ्रमित करने वाले देवी-देवताओं के प्रति विश्वस्त नहीं होते तथा इनके वाणियों पर बताये मार्गों पर चलने वाला सुधर्मा कोयले के मध्य हीरा बन जाता है। उसे दुनियादारी, सांसारिकता के भोगों के प्रति किंचित लिप्सा प्रभावित नहीं कर पाती, वह तो अलमस्त, प्रतिपूरित, सामर्थ्य से लबरेज शक्ति का प्रदाता होता है। अघोरेश्वर सर्व की शक्ति, सर्व की जननी सर्वेश्वरी का सच्चा उपासक होता है अघोरेश्वर मात्र क्रियान्वित करने में विश्वास रखते हैं, वे कत्तई प्रचार-प्रसार, दंभ, पाखण्ड को पास भी नहीं फटकने देते। इनकी गाथाओं, बाणियों दिनचर्याओं, व्यवहारों को भक्तों को, अघोरेश्वर अनुयायियों को हर संभव प्रयास कर मानवता के बीच जमकर प्रचार-प्रसार करना चाहिए, जिससे सांसारिक झंझावातों से जूझते, जलते मनुष्य को एक स्थायी शान्ति, विश्राम मिल सके, यह वर्तमान काल की सबसे बड़ी पूजा है।

हम आम जनों के लिये अघोरेश्वरों का दर्शन, उनके बताये मार्ग का अनुसरण करना, उन्नीस सूत्रीय कार्यक्रम में हाथ बँटाना ही अघोरेश्वर को जानना है, अन्यथा अघोरेश्वर को सीप में समुद्र समाना की संज्ञा दी गई है, ये अथाह होते हैं, तभी तो कबीरदास जी भी कहते हैं कि ''हेरत हेरत हे हरि गया कबीर हेराय'' समुद्र समाना सीप में सो कत हेरा जाय'' यानी एक मानव को अघोरेश्वर के पूर्णता का ज्ञान उसी तरह होता है जैसे नमक का पुतला अथाह गहरे सागर की तलहटी को तलाशने में स्वयं समाहित हो जाता है।

पृष्ठ चार का शेष

इसका आप स्वयं अनुमान नहीं लगा सकते हैं कि आप कैसी मनोदशा में हैं? कितना आप स्थिर व्यक्ति हैं और आपमें चंचलता है या नहीं? चाहे आप पूजा-पाठ की स्थिति में हो या अपने रोजी रोटी के लिए प्रयत्नशील हों, मगर आपकी दशा में कोई फर्क नहीं पड़ता है। अचानक कोई आकर कहे कि अमुक काम है, तब भी पाप उस समय भी नम्रता से ही उसके सामने पेश होते हैं और उन्हीं के प्रभाव के कारण उसको भी थोड़ा नम्र होने का सुभाव लगने लगता है। जब आप दोनों के क्रोध चला जायेगा तो शान्ति का प्रभाव बढ़ेगा और जब शान्ति अपने लगेगी तो बहुत ही शीतलता और माधुर्य की तरफ चित्त जायेगा। कितना जीवन सुहावना होगा, कितना सुखमय जीवन होगा, आप अनुमान नहीं लगा सकते। हमारी करबद्धता अहिंसा का प्रतीक है। इससे ईटा नहीं उठता, डण्डा नहीं उठता। तलवार उठाने की तो कोई बात ही नहीं है। महानता का प्रतीक है। यही तुम्हारी महानता का प्रतीक है जो तुम अपने हाथ जोड़कर देवता का अभिवादन कर रहे हो। वस्तुत: तुम किसी का अभिवादन न करके अपना अभिवादन कर रहे हो। जब आप हम अपने हाथ जोड़कर दूसरे को महान कर सकते हैं तो क्या वह हाथ अपने को महान नहीं कर सकता है? जितना हम उस देवी देवता के सामने उन्हें महान समझ कर इस तरह से

शारीरिक मुद्राओं तथा मनोभावों का अर्न्तसम्बन्ध

करबद्ध हैं उससे तो दोनों हाथ हमारे ज्यादा नजदीक हैं। उससे ज्यादा महान हैं।

मंत्र तो बहुत से लोग एक सा ही जपते हैं। बहुत से लोग भिन्न-भिन्न जपते हैं। बहुत से लोग एकाक्षर जपते हैं और बहुत से लोग नाम शब्द लगाये हुए जपते हैं। मगर यह सब कुछ आप वाणी के ओर के साथ जब अभिव्यक्त कर रहे हैं तो आप अभिव्यक्त नहीं कर रहे हैं बल्कि आपकी वाणियों और कंठों को बहुत से सूक्ष्म कणों ने जो छेक रखा है, उसे फेंककर उन महान पवित्र कणों को आप एकत्रित कर रहे हैं जिनके प्रयोग से आप नये चित्रों तथा शिल्पों को जन्म देंगे तथा उसका प्रत्यक्षी-करण होगा और उससे वह वचन निकलेगा जो आपके अनुकूल होगा। उस वचन को आप कहते हैं कि मुझे वह देवी प्राप्त हुई, वह देवता प्राप्त हुआ जो मेरे लिए अमुक वचन दिए हैं। अब मेरा कार्य अपने आप में स्वत: सिद्ध होगा। आप जब उतावला नहीं होंगे और टेढ़-मेढ़ नहीं चलेंगे, तो वह मंत्री तो स्वयं सिद्ध है। उसको सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है। अपने ही सीधा रहने या सिद्ध होने की आवश्यकता है। जब हम ही ढेढ़-टांढ़ (वक्र) रहेंगे तो वह क्या करेगा ही। जब सीधे-सीधे और सहज सुभाव में प्रकृति को जानते हुए उस तरह से रहेंगे तो उसका अवश्य मिलन होगा, सुनिश्चित है, ध्रुव सत्य है। मगर न मालूम आपमें आपकी मनोस्थिति कहाँ है, कैसी है और आप किस परिस्थिति में हैं, मैं कह नहीं सकता। वह तो सर्वत्र, सब कणों में और पूर्ण रूप से सब जगह व्याप्त है। अब आपका उसमें कितना अधिकार है, आपका कितना बड़ा पात्र है, उसी पात्रता के अनुरूप आपमें वह उतरेगा।

हम लोगों का सामाजिक जीवन भी है जहाँ शोरगुल तथा आवाज होती ही रहती है। अब इन्हीं घुटन के साथ उस सच्चाई की तरफ बढ़ना तथा जानना है कि क्या सच है, क्या झूठ है? इसी में जीना भी है और इसी में मरना भी है बन्धुओं। मगर जो आप कर रहे हैं और आपसे जो हो रहा है, वह अच्छा है। जो नहीं हो रहा है और जो होने वाला है, उस पर आपको अपना ध्यान देना होगा क्योंकि भूतकाल को कोसने से न वर्तमान सुधर सकता है और न भविष्य हमारा कोई निर्णय ले सकता है। इसके बाद गौबरौरा तथा भौंरा वाली प्रसिद्ध कहानी जिसमें भौंरा का संग पाकर गोबरौर मधुवन पहुँच गया और पुण्य के साथ ही वह देवी के मस्तक पर चढ़ गया, का उदाहरण देते हुए पूज्य अघोरेश्वर ने कहा- यदि हम महापुरुषों, सज्जनों, साधु-महात्माओं के पास या देव मन्दिरों में जाय और अपनी संकीर्णताओं तथा मलीनताओं को साथ लिए रहें तो फिर हमें वहाँ का आनन्द नहीं प्राप्त होगा। हमारे लिए सब जगह अभाव ही अभाव रहेगा। दुर्भिक्ष ही रहेगा। अपनी सभी गन्दगी को छोड़कर यदिहम वहाँ जायेंगे तो शायद वह आनन्द और सुख हमें मिल सके। बहुत से ऐसे प्राणी हैं जो पहुँचने को तो पहुँच जाते हैं बड़ लोगों तथा संत महात्माओं के पास, मगर ठहर नहीं पाते। अगर किसी तरह ठहर भी गये तो परिचय नहीं हो पाता है। परिचय भी हो गया तो उनका आचरण व्यवहार कुछ उल्टे ही ढंग से हो जाता है और वह कुछ प्राप्त करने से वंचित ही रह जाते हैं। इसलिए पहुँचना देर से भी हो लेकिन ठहराव हो,तब उस सुख, शान्ति तथा आनन्दकी प्राप्ति हो सकती हैं। देवी, देवता, भगवान और भगवती को विग्रह के रूप में हम रोज देखते हैं लेकिन हमें उससे कोई लाभ नहीं होता। इसका कारण है कि हमारे सोचने तथा देखने की प्रक्रिया दोष पूर्ण है। हमारी दृष्टि ही दोषपूर्ण है। मगर उन्हें अपना हाथ जोड़ने के समय, अपनी प्रार्थना तथा पूजा के समय और प्रणाम निवेदन करने के समय यदि हम देखते हैं कि हम उनके नजदीक आकर कितने महान बने हुए हैं, कितना मुझमें नम्रता आ रही है और शान्ति तथा सुख वाली जो मुद्राये हैं वह कितनी पैदा हो रही हैं तो कहा जा सकता है कि हमें पूजा, प्रार्थना से कुछ प्राप्ति हुई। इस दृष्टि से यदि हम देखेंगे और इसमें अपने आपको ढालेंगे तो हमें सब कुछ सुलभ होगा।

क्रीं कुण्ड स्थल की जय

जन-जन को मैं आज सुनाउँ, गौरव गाथा ज्ञान की,
कीनारामी परम्परा के औघड़ सन्त महान की,
सशरीर जहाँ शिव जी बसते महिमा इस स्थान की,
कीनाराम स्थल की जय! क्रीं कुण्ड के जल की जय!!
भारत भूमि त्रस्त हो जलती, घोर अंधेरा काल था,
यवन के अत्याचार से पीड़ित जन-गन-मन बेहाल था,
जमींदार आतातायी थे समय बड़ा विकराल था,
बाबा कीनाराम ज्यों आये चमक उठा सब माल था,
कीनाराम स्थल की जय, क्रीं कुण्ड स्थल के जल.....।
घूम-घाम कर तृप्त धरा कर, बाबा काशी आये थे,
क्रीं कुण्ड स्थल में आकर धूनि यहीं जलाये थे,
अनाचार, पाखण्ड, दंभ से मुक्ति वही दिलाए थे,
हर जन हर-हर महादेव का स्वर लहरी फैलाए थे,
कीनाराम स्थल की जय.....।
चिर समाधि में जा बैठे तो बीजाराम सम्हाले थे,
फिर गद्दी जबर्दस्त राम जी स्वयं ही देखे भाले थे,
गुरुपीठ से भांति लुटाते औघड़ सन्त निराले थे,
बाबा गैबी राम के जिम्मे दीन-दुखी जगवाले थे,
क्रीं कुण्ड स्थल की जय.....।
पंचम गुरु भवनी राम जी क्षत्रिय कुल के बालक थे,
छठवें बाबा जयनारायण राम बने उद्धारक थे,
सप्तम गुरु श्री मथुरा राम जी कुंभकार गृह वाले थे,
अष्टम पीठ पे सरयु राम जी ब्राह्मण कुल के पाले थे,
कीनाराम स्थल की जय, क्रीं कुण्ड के जल.....।
बाबा दलसिंगार राम जी नवम गुरु पधारे थे,
बाबा श्री राजेश्वर राम जी करते वारे-न्यारे थे,
बंग प्रदेश के आशु राम जी स्थल के रखवाले थे,
अपशब्दों की झड़ी लगाते वो भी मौजी मतवाले थे,
कीनाराम स्थल की जय.....।
एकादश पीठ पर कीनाराम जी फिर शिव रूप में आये हैं,
बड़े सरकार से पूजित होकर राष्ट्र को धन्य बनाये हैं,
बाबा श्री सिद्धार्थ रूप में गौतम राम कहाये हैं,
व्याप्त सामाजिक घोर बुराई औघड़ दूर भगाये हैं,
कीनाराम स्थल की जय, क्रीं कुण्ड के जल.....।
कीनाराम स्थल की जय, क्रीं कुण्ड के जल.....।

हर हर महादेव

अवतरण दिवस

पूज्य पीठाधीश्वर बाबा श्री सिद्धार्थ गौतम राम जी महाराज का ४६वाँ अवतरण दिवस १ मई २०१५ को पूज्यश्री के उपस्थिति में स्थल प्रांगण में मनाया जायेगा। पिछले वर्ष की भाँति इस वर्ष भी तिलक-दहेज रहित सामूहिक विवाह कराया जायेगा। संस्थान के सामाजिक एवं आध्यात्मिक कार्यक्रमों में से एक जो तिलक-दहेज का जहर पूरे समाज में फैल चुका है। उसे दूर करने के लिए संस्थान ने तिलक-दहेज रहित सामूहिक विवाह कराने का वीणा उठाया है?

शारीरिक मुद्राओं तथा मनोभावों का अर्न्तसम्बन्ध

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्म बन्धुओं!

हम देखते हैं कि आप खड़े होकर अभिवादन करते हैं, पुन: बैठते हैं और इसी तरह से आप देवता और देवियों का अभिवादन करते हैं इस पवित्र अवसर पर आपका जो यह अभिवादन है, प्रार्थना है, आपके महानता की द्योतक है। ऐसा करके आप किसी देवता या देवी के सामने उनका अभिवादन नहीं करते हैं, किसी साधु-महात्मा और गुरुजनों का अभिवाद नहीं करते हैं बलिक आप अपनी नम्रता, सौजन्यता तथा धैर्य का परिचय देते हैं। आप उस भावना को नहीं समझ पाते हैं कि मैं ऐसा क्यों करता हूँ, ऐसा क्यों होता है? शायद आपने इस पर कभी ध्यान भी नहीं दिया होगा।

प्रिय बन्धुओं! आप खड़ा होकर जो अपने बड़ों और सम्मानितों को सम्मान देने की चेष्टा करते हैं, मान्यता देते हैं और उनके आदर का पात्र होते हैं। जैसे भूखे लोगों को अन्न और जल देकर आप उन्हें अन्न और जल ही नहीं देते हैं बल्कि बल देते हैं, उन्हें पौरुष देते हैं, चलने-फिरने की शक्ति देते हैं और अच्छे स्वास्थ्य के साथ-साथ उसमें उत्साह भरते हैं, जिसके चलते वह अन्न जल ग्रहण करके अपने उत्तरदायित्व को यदि समझते हैं तो वह भी राष्ट्र और समाज तथा स्वयं अपने प्रति उत्तरदायित्व का निर्वाह करके गौरवान्वित होते हैं। इसी तरह आप अपने देवता, देवी, महापुरुषों तथा संत-महात्माओं के सामने नत-मस्तक होते हैं तो आपकी यह नम्रता आपको महानता की तरफ ले जाती है। यदि आप काष्ठवत हाथ पर हाथ पीछे बाँध हुए खड़े हैं तो यह पीछे हाथ बांधने का अर्थ है कि आप आक्रमक हैं, आक्रमण करना चाहते हैं। जब आप दोनों हाथ आगे करते हैं तो यह इसका प्रतीक है कि आप बिल्कुल नम्र हैं, धैर्यवान हैं और नि:अस्त्र हैं आपके दोनों जुड़े हुए हाथ लौकिक किसी भी अस्त्र के परित्याग की तरफ संकेत करते हैं। किसी को पाप कृत्य में प्रेरित नहीं करते हैं, दु:ख और कठिनाइयों की तरफ प्रेरित नहीं करते हैं तथा दूसरे को आप यह भी प्रेरणा देते हैं कि वह भी नतमस्तक होकर महानता को तरफ अग्रसर हो, हाथ जोड़ ले और आप ही की तरह शान्त हो जाय। इसके विपरीत आपने देखा होगा हाथ पीछे की तरफ बाँध करके या दोनों आगे-आगे फेर कर चलने वालों को। उनकी क्या मन:स्थिति होती है उस समय? उनमें क्या-क्या गतियाँ होती हैं तथा उनके शरीर से कैसी-कैसी तरंगे निकलती हैं? उन तरंगों के कुप्रभाव से वह भी प्रभावित होते हैं और दूसरों को भी प्रभावित करते हैं बन्धु!

जहाँ पर मैत्री होती है, करुणा और दया होती है, वहाँ पर उसके हाथ जोड़ने के पूर्व ही हम हाथ जोड़ लेते हैं। हमारे देवी, देवता, भगवान और भगवती- जो हमारी कल्पना से भी बहुत दूर के हैं,वह भी हमारे हम गुणों के कारण नतमस्तक हो जाते हैं। आपने इस तरफ कभी ध्यान दिया है या नहीं, मैं कह नहीं सकता। मगर वह बिल्कुल नतमस्तक हो जाते हैं आपकी इस नम्रता के लिए। इसीलिए विष्णु भी कहते हैं कि-

"नाहं बसामि वंकुण्ठ योगोनामृ हृदयन्च मम भक्त हृतकायते तास्मिन् नारद:! हे नारद! मैं न वैकुण्ठ में रहता हूँ, न योगियों के हृदय में, मेरे भक्त जो मेरा गुणगान करते हैं और मेरे प्रति जो इस तरह की नम्रता का प्रदर्शन करते हैं, मैं उनके साथ रहता हूँ। उनमें नम्रता बनकर रहता हूँ, शान्ति बनकर रहता हूँ और उनमें प्रेम बनकर रहता हूँ। आप अपने बड़ों-बूढ़ों तथा पूज्य के साथ या अपने छोटों तथा उपेक्षित लोगों के साथ भी जब नम्र होते हैं तो क्या आपको तृप्ति नहीं मिलती है? बहुत तृप्ति होती है। अपने आश्रितों के प्रति उस समय कहीं गयी कठोर बात भी तृप्ति देती है क्योंकि उसमें उनका कल्याण छिपा होता है। "हृदय प्रीति मुँह वचन कठोरा" हृदय में आपके अगाध प्रीति है तभी आप अपने कठोर वचन अपने पुत्र-पौत्रों, कर्मचारी तथा आश्रितों पर ढालते होंगे, प्रयोग करते होंगे। यदि आप कहते हैं तो इधर से भी वैसी ही बौछार आयेगी या उससे बढ़कर भी आ सकती है। इसलिए अपने जो प्रियजन होते हैं, उन्हीं के प्रति कोई कठोर शब्द निकाला जाता है उनके कल्याण के लिए। जिससे वे समाज तथा स्वयं की दृष्टि में किसी गलत रास्ते पर न चल सके। लेकिन इस प्रताड़ना का यदि गलत अर्थ लगा लेते हैं तो यह उनका दुर्भाग्य है बन्धु। अपने श्रेष्ठ जनों द्वारा प्रयुक्त कठोर शब्द या प्रताड़ना तो हमारे प्रति उनके प्रेम का पूर्वाभ्यास है। हमें इससे न तो घबड़ाना चाहिए और न धैर्य छोड़ना चाहिए। हमारे प्रति ऐसे शब्दों का प्रयोग करके वह हमारे साथ बहुत ही न्याय करना चाहते हैं, न कि उस बखत हम पर दया करके बक्श देना चाहते हैं, जिससे आगे चलकर हम और दुर्भाग्य के मारे हो जाय।

आप सुबह में जब यहाँ प्रार्थना, पूजन, चिन्तन और मनन में लगे रहते हैं तो बहुत से छोटी-छोटी पंक्षियाँ इन वृक्ष और लताओं पर बैठकर बड़े सुमधुर शब्दों में आवाज करती है। आपने सुना भी होगा यदि ध्यान दिया होगा तो (तोता के ही रूप में हनुमान भी यह उपदेश दिया था—

चित्रकूट के घाट पर भय संतन की भीर।
तुलसी चंदन घिसत तिलक देत रघुवीर।।

इसी प्रकार केदार जी में गुप्त काशी के ऊपर एक देवी का पीठ है। यहाँ पर बहुत छोटी-छोटी पक्षियों के रूप में ही मुनियों ने देवी को देखा था। हमारी संस्कृति तथा उपासना में हमारे लिए यह पक्षियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं जिनका संगीत बहुत ही सुमधुर होता है और जो साथ में भी गाती हैं और अकेले भी। यहाँ की तरह वह बेसुर ताल का घड़ी-घण्ट नहीं बताती हैं, ऐसा नहीं होना चाहिए। "घन्टा शूल हनान्च।" अर्थात् मैं वह घंटा बजा रहा हूँ जिससे मेरे लौकिक, पार लौकिक, दैहिक और दैविक जो शत्रु हैं, सभी के कान शब्द हो जाय और हमारी तरफ उनकी दृष्टि न पड़े। तब शूल लिए हुए भगवती उनका हनन करे। ऐसे भाव से वह स्वर निकलना चाहिए और डमरू से भी वैसा ही सुमाधुर्य निकलना चाहिए। यदि यह बजाया जाता है तो बहुत ही प्रशिक्षित व्यक्ति के हाथ में होना चाहिए जिससे वाद्यों को आवाज का कोई अर्थ हो, कोई मतलब हो, कोई सांकेतिक भाषा हो। यदि ऐसा संभव न हो तो उसका न बजाना ही अच्छा है। मंदिर के पुजारियों की तरह (पूजा के अरि या दुश्मन), जो कुछ नहीं जानते, अज्ञानता आप लोगों को शोभा नहीं देती है। इन अज्ञानताओं के कारण हम बहुत सी बातों से वंचित हो जाते हैं तथा बहुत से अधिकारों से वंचित हो जाते हैं। जब आप पूजा करते हैं तो उन पक्षियों की आवाजों की यदि आप उपेक्षा करेंगे तो आप, जिस सही ढंग से जानना चाहते हैं, उससे बिल्कुल वंचित हो सकते है, क्योंकि न मालूम हमारे इष्ट की ही वह आवाज हो, वह शक्ल हो। इस रूप में हमारे साधुओं, महात्माओं तथा महापुरुषों को उनका इष्ट मिलता है। मैं कुछ व्यक्तियों को देवी-देवता, इष्ट और महापुरुषों के सामने साष्टांग दण्डवत करते हुए देखता हूँ लकुटी की भाँति। लकुटी होती है बूढ़ों की छड़ी। लकुटी की भाँति से आपके चरणों में गिर पड़ रहा हूँ भगवान! यह लकुटी किसकी है? एक बूढ़े की है। हम पुरातन आत्मा को जो बार-बार जन्मते-मरते यहाँ तक पहुँची है अब तो हमारे को इससे मुक्ति मिले। उस लकुटी को अब उठा लीजिये आप। इस साष्टांग दण्डवत का यही प्रयोजन है। जो लकुटी की भाँति अपने इष्ट के समान गिरता है वह अल्पायु नहीं होता। वह दीर्घायु होता है बन्धु! हमारी यह जो संस्कृति है, हमारी जो यह परम्परा है, उपासना की पद्धति है, बहुत ही महान तथा तत्त्वों से पूर्ण है। वैज्ञानिक भी है और मर्मपूर्ण भी। समझ से बहुत परे है। जिस समय हम आप उपासना करते हैं तो आसन में बैठते हैं, ध्यान करते हैं त्रिकोणवत यंत्रवत बैठते हैं। इन सब मुद्राओं का बहुत महत्व है। शारीरिक मुद्राओं को देखकर मनुष्य को आंका जाता है कि यह किस विचारधारा का आदमी होगा। दस मिनट पहले क्या सोचता था, घण्टा भर पहले किस प्रभाव से प्रभावित था तथा यहाँ आने पर इसकी मनोदशा क्या है? ऐसी दृष्टि पावोगे आप यदि सतर्क दृष्टि से उपासना करोगे। यह बहुत सुगत है और इन्हीं देवताओं के चरणों में सुलभ है। इस तरह की भावनाओं से यदि तुम पूजा-पाठ या अपनी साधना कर रहे हो, तो तुम्हारी दृष्टि में यह अवश्य प्रतिष्ठापित होगा और तुम किसी मनुष्य के मन की बात जान सकते हो कि यह अवश्य ही ऐसी ऐसी मनोदशा में इतना देर पहले था और अब इसकी मनोस्थिति यहाँ पर ऐसी है। इसके बाद इसकी मनोस्थिति ऐसी हो सकती है। यही धीरे-धीरे अभ्यास आपका ठीक रहा तो आप १०१ प्रतिशत तक सही-सही मनोस्थिति के बारे में जान सकते है। लेकिन इसे कहना अनुचित होगा क्योंकि लोग अन्यथा अनुमान तुम्हारे बारे मे लगाने लगेंगे।

तो प्रिय बन्धुओं! हम जो चिन्तन और प्रार्थना के समय अपने मेरुदण्ड को सीधा कर अपनी भुजाओं के माध्यम से आकृतियाँ बनाकर मुद्रा में मुद्रित रहते हैं, इन मुद्राओं में बैठने पर हममें से जो शोभा, कान्ति, तेज या बहुत सा कम्पन निकलता है,

शेष पृष्ठ तीन पर

अघोर सूत्र

☞ **आप किसी की भी जीविका का आलोचना कभी न करें चाहे वह कसाई की जीविका हो या पशुपालक की। कसाई में भी यदि भाव है, उसका लक्ष्य है तो वह हम आपसे बहुत ज्यादा नजदीक है। मांस की बोटी काटते हुए भी उसे अपने लक्ष्य की तरफ ध्यान है तो यही ध्यान पूजा है।**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी